



## सिने-आलोचना का (भारतीय-हिंदू?) रस-सिद्धांत

January 3, 2016, 12:39 PM IST विष्णु खरे in सिने समय | अन्य

3

0

0

G+1

0

संसार के अधिकांश दर्शक सिनेमा को मनोरंजन या अच्छा वक्त बिताने के लिए देखते हैं। यूं भी अपने यहां अधिकतर अय्याश हिंदी फिल्में उनके क्षणभंगुर संगीत सहित देख कर भूल जाने के लिए बन रही हैं। फिल्म की जो कचकड़े की रील अपने स्पूल-सहित आज भी सिनेमा का ग्राफिक प्रतीक बनी हुई है, वह अब बाबा आदम के वक्त की चीज हो चुकी है। एक और विडंबना यह है कि जिस देश में लाखों लोग एक जून पेट काटकर भी फर्स्ट शो जरूर देखेंगे, वहां लेखकों, बुद्धिजीवियों, प्राध्यापकों, समीक्षकों ने न फिल्में देखीं, न उन पर सोचा, न उन पर लिखा, जबकि इस्लाम के पहले के हमारे पूर्वजों ने संसार के किसी विषय की 'प्रैक्टिस' या 'थिअरी' को अविचारित जाने नहीं दिया। भरत मुनि के युग में यदि सिनेमा-जैसी चीज आ जाती तो हमारे संस्कृत पंडित उस पर कितना-क्या लिख डालते, इसकी कल्पना से ही कलेजा मुंह को आता है। आज का संस्कृत (पोंगा)पांडित्य तो अपने पतन में ही उल्लेख्य है। हिंदी की हालत बदतर है।



उधर पश्चिम में कई सिने-सिद्धांत विकसित किए गए हैं और प्राचीन एथेंस-रोम से लेकर आज तक का



मानविकीय चिंतन फिल्म-कला के हर पहलू पर लागू किया गया है। राजनीति, अर्थशास्त्र, समाज-शास्त्र, दर्शन, ललित कलाएं, भाषा-शास्त्र, मनोविज्ञान, संस्कृति, यहां तक कि विज्ञान भी, आज फिल्म थिअरी का हिस्सा हैं क्योंकि सिनेमा में इन सब की आवाजाही है। हूगो मुस्टेन्बर्ग, रुडोल्फ आर्न्हाइम, ख्रिस्तिआन मेत्स, आंद्रे बाज़ें, बैला बालास, सीग्रीड क्रात्साउअर, एंड्रू सैरिस, सोस्योर, लेवी-स्त्राउस, उम्बेर्तो एको, ल्वी अल्टुसेर, ज्यां-ल्वी बोद्री, लॉरा मल्वी, लूस इरिगारे, मेरी एन डोएन आदि स्त्री-पुरुष आलोचकों, अनेक महान निर्देशकों, अन्य सिने-कर्मियों तथा 'काइए दु सिनेमा' और 'सिनेथीक' जैसी पत्रिकाओं आदि ने फिल्म-कला के विश्लेषण और आस्वादन को जिन ऊंचाइयों तक पहुंचा दिया है, उनके मुकाबले हमारी उड़ान ब्रॉइलर मुर्गियों जितनी है।

इसलिए यह देख कर हैरत होती है कि मुंगेर, बिहार के एक युवा उपन्यासकार ('अल्पाहारी गृहत्यागी', हार्पर), जो

आईआईटी, दिल्ली से केमिकल इंजिनियरिंग के बी.टेक. हैं, प्रचण्ड प्रवीर ने हिंदी फिल्म सैद्धांतिकी के 'वर्जिन' मुक्ताकाश में संपाति जैसी एक क्वांटम उड़ान भरी है और संस्कृत के रस-सिद्धांत को विश्व-सिनेमा पर लागू करने की कोशिश की है। मैं उनकी इस पुस्तक पर लिखने का अधिकारी नहीं हूँ क्योंकि न तो मैं सिनेमा का सैद्धांतिक व्याख्याकार हूँ और न भारतीय-संस्कृत 'रस-सिद्धांत' का अध्याता – सच तो यह है कि मैं फिल्म-सरीखी वैश्विक, लोकतांत्रिक और जबर्दस्त लोकप्रिय कला-विधा के 'रस'-आस्वादन को अधिकाधिक 'सरल' और व्यापक रखने के पक्ष में हूँ, इसलिए उस पर 'रस' का संस्कृत पैमाना लागू करने में मुझे कई तरह की बाधाएँ हैं। साहित्य-चर्चा में भी मैं, मार्क्स और नगेन्द्र को धन्यवाद, रस-मीमांसा से दूर रहा हूँ।

जब प्रचण्ड प्रवीर ने इस पुस्तक के परिच्छेद 'स्वतंत्र' लेखों के रूप में प्रकाशित करवाने शुरू किए तो उन्हें पढ़कर मैं उनकी इस परियोजना से निराश ही हुआ था। लेकिन अब जबकि उनकी संपूर्ण पुस्तक मेरे सामने है, तो मैं अब भी उनके अभियान से बहुविध असहमतियाँ रखते हुए उससे बहुत प्रभावित हुआ हूँ। लेखक ने अपने ध्येय को जिस गंभीरता से अपने और पाठकों के सामने रखा है, वह सांसर्गिक है।

यह पुस्तक कहीं भी सतही और चलताऊ नहीं है – सिनेमा पर अधिकांश हिंदी पुस्तकें और 'समीक्षाएं' अक्सर वैसी हो जाती हैं – और धीरे-धीरे इसकी सजीदगी आप पर भी तारी होने लगती है, शर्त यही है कि जितनी फिल्में प्रचण्ड प्रवीर ने देख रखी हैं, वह भले ही सभी आपकी निगाह से न गुजरी हों, किंतु आपकी जानकारी में होनी चाहिए, जो, जैसा कि स्वयं लेखक ने कहा है, आज के लैपटॉप, डीवीडी, पैनड्राइव, एमआरक्यूई, आइएमडीबी, टॉरेंटज़ और पालिका बाजार आदि के युग में बहुत कठिन नहीं रह गया है।

यह पुस्तक स्वयं लेखक और अपने सामने कई चुनौतियाँ खड़ी करती है। वह मान कर चलती है कि उसके पाठक इतने वयस्क और प्रबुद्ध सिने-दर्शक हैं कि वह



उसकी 'सामग्री' से कोई बौद्धिक कठिनाई महसूस नहीं करेंगे और उसके 'संस्कृतनिष्ठ' 'तत्सम' वातावरण से बिदकेंगे नहीं। उसमें देशी-विदेशी, प्राचीन-अर्वाचीन संदर्भ और उद्धरण बिखरे हुए हैं, किंतु वह उसके बीच की यात्रा को कंटकाकीर्ण नहीं, बल्कि एक सुखद भटकाव से भर देते हैं। किसी भी सुंदर उद्यान या समृद्ध संग्रहालय में एक रास्ता सीधा भी होता है, जिसके लिए बाण- या संख्या-चिह्न बने होते हैं, किंतु केवल सरसरी गुजरनेवाले ही उन्हें पकड़ते हैं। यह पुस्तक हमें बार-बार रोकती-ठिठकाती है। फिर जब हम लेखक द्वारा की गई श्लोकों की व्याख्या और उनकी प्रयुक्तियां देखते हैं, तो हमें तो उतनी संस्कृत आती नहीं और हम सोचते हैं कि क्या खुद लेखक को आती है और उस पर भरोसा किया जा सकता है? इस पुस्तक में कोई भी ऐसा पृष्ठ नहीं है जिसके किसी एक वाक्य या वक्तव्य से आपकी सहमति या असहमति न हो या जो आपमें कोई बौद्धिक शंका-संशय न जगाता हो। आप इसे एक अंतहीन खंडन-मंडन में पढ़ते हैं।

हिंदी में स्नातकोत्तर शोध-कार्य को कॉलेजों, विश्वविद्यालयों और उनके दशकों से अयोग्य प्राध्यापकों ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। प्रकाशक भी विद्वत्ता और रिसर्च के नाम पर वह कूड़ा छाप रहे हैं जिसे देवनागरी लिपि पहचानने वाला कोई आत्मसम्मानी सूअर तक अपनी थूथन नहीं लगाएगा। आज देश में ऐसा कोई भी भारतीय भाषा विभाग या उसका कोई अध्यापक मुझे दिखाई नहीं देता जहां प्रचण्ड प्रवीर की इस पुस्तक की 'पिअर रिव्यू' हो सकती।

हिंदी के कथित प्राध्यापक न इतना सिनेमा समझते हैं, न संस्कृत, न रस-सिद्धांत; संस्कृत के अधिकांश 'प्राध्यापक', जो विद्यानिवास-मिश्र सरीखों के मानस-पुत्र हैं, सिनेमा देखने को लुच्चों-लफंगों-अंत्यजों का काम और हिंदी-अंग्रेजी को अस्पृश्य मानते हैं; सिनेमा के कोई कोर्स हैं ही नहीं और जहां हैं, वहां उन पर फिल्म-निरक्षर मतिमंद वही हिंदी के प्राध्यापक काबिज हैं जिनकी लेंडी फिलहाल इसी में तर हो रही है कि एम. ए. में लुग्दी साहित्य लग गया है।



प्रचंड प्रवीर

लेकिन यदि सिनेमा में आपकी किंचित् भी रुचि है तो आप इस पुस्तक को लेखक से लड़ते हुए भी उसे एक ही बैठक में पढ़ना चाहेंगे। मैं यह बहुत सावधानी से लिख रहा हूं कि सिनेमा पर भारतीय शास्त्रीय आलोचना परंपरा को आयद करने की कोशिश की शुरुआत करनेवाली ऐसी पुस्तक विश्व-सिने-समीक्षा इतिहास में पहली है। इसमें बहुत जोखिम उठाया गया है। इस महती प्रयास का उपहास भी किया जा सकता है। इसकी आशंका भी है कि इसमें छद्म-गांभीर्य (सूडो-प्रोफंडिटी) खोज ली जाए। लेखक ने ही नहीं, उसके प्रशंसकों ने भी एक ओखली में सर दे दिया है। लेकिन, दूसरी ओर, हम चाहें तो प्रचण्ड प्रवीर को बिना किसी अतिरंजना के हिंदी-फिल्म-आलोचना का युवा महावीर प्रसाद द्विवेदी या युवा 'हाली' भी कह सकते हैं क्योंकि मतभेदों के बावजूद यह पुस्तक एकदम नई दृष्टि रखती और देती है, नूतन मार्ग बनाती है और अग्रगामी है।

हिंदी में देखते-ही-देखते कई मेधावी और उल्लेखनीय फिल्म समीक्षक-समीक्षिकाएं सक्रिय हो गए हैं। वह बहुत उम्दा काम कर रहे हैं। अब उन्हें प्रचण्ड प्रवीर जैसा धुनी, परिश्रमी और 'देशज' साथी भी मिल गया है। वह 'सब कुछ संस्कृत और प्राचीन ऋषि-मुनियों के पास था' के प्रतिक्रियावादी और पुनरोत्थानवादी राष्ट्रवाद से बचे हुए हैं। वह सिनेमाघरों, ऐक्टरों, निर्माता-निर्देशकों पर पथराव करनेवाले फासिस्टों के खिलाफ खड़े हुए हैं और सिनेमा की पैरवी और बचाव कर रहे हैं। यह पुस्तक नई अध्ययन-दिशा की ओर इंगित तो करे, दूसरों के साथ स्वयं भी किसी प्रतिक्रियावादी चूहा-दौड़ में शामिल न हो। यहां नए, संघर्षशील किंतु महत्वाकांक्षी 'दखल प्रकाशन' को भी बधाई और धन्यवाद देने चाहिए कि उन्होंने इस पुस्तक को प्रकाशित किया।

ऐसा करने की मेरी आदत नहीं, किंतु यह ऐसी अद्वितीय पुस्तक है कि मैं सख्त सिफारिश करता हूं कि इसे खरीदा जाए और सिनेमा तथा हिंदी के पाठ्यक्रम में अनिवार्यतः सम्मानजनक जगह दी जाए। एक बहस शुरू तो हो।

डिसक्लेमर : ऊपर व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं

लेखक



विष्णु खरे

ख्यात कवि, चिंतक और पत्रकार विष्णु खरे जब भी अपनी बात कहते हैं,...

और

इस पोस्ट पर कॉमेंट बंद कर दिये गये है



सबसे चर्चित पोस्ट

सुपरहिट पोस्ट

1. 'कश्मीर' में तिरंगे पर रखकर गाय काटी, झंडा भी जलाया?
2. स्मृति इरानी को बात-बात पर गुस्सा क्यों आता है?
3. योग दिवस: मोदी ने किया था तिरंगे का 'अपमान'?
4. इससे पहले मेट्रो फजीहत कराए उसके मोह से निकलना होगा
5. चक दे टीम इंडिया, अब रियो है अगला निशाना

टॉपिक से खोजें

बीजेपी अमेरिका चुनाव मुंबई कांग्रेस सरकार आप नरेंद्र-मोदी मोदी ब्लॉग दिल्ली भ्रष्टाचार व्यंग्य पाकिस्तान केजरीवाल समाज क्रिकेट राजनीति नेता अरविंद-केजरीवाल करप्शन भारत चीन विशेष आलोक-पुराणिक

नए लेखक

और »

मुकेश कुमार	सत्येंद्र रंजन	विश्व गौरव	चंद्रभूषण	महेश दर्पण	संजय कुंदन	सत्यखोज	मौनेका गुप्ता	रोहित मिश्र	डॉ. लक्ष्मीकांत त्रिपाठी
-------------	----------------	------------	-----------	------------	------------	---------	---------------	-------------	--------------------------

FROM WEB

Experience the largest island on earth  
Tourism Australia



Buy Le 2 with the most powerful octa-core CPU  
Le Eco



Journey on we're by your side!  
Bridgestone




Limit the impact of accidents on your life  
ICICI Lombard





हमें Like करें









Navbharat Times Online  
4,152,450 likes

Like Page

Use App

Be the first of your friends to like this



Today		7 Days	30 Days
	Vinay Agrawal PLATINUM		130 Points
	Vipin PLATINUM		83 Points
	Himanshu Shekhar SILVER		76 Points
	Ddindian PLATINUM		57 Points
	Sarab Johar PLATINUM		56 Points
